Shikshan Sanshodhan : Journal of Arts, Humanities and Social Sciences ISSN(o): 2581-6241
Monthly, Peer-Reviewed, Refereed, Indexed Journal Impact Factor: 9.134
Volume - 9, Issue - 7, July - 2026

DOIs:10.2018/SS/202607012 --:-- Research Paper / Article / Review

उपनिषदों में निहित शिक्षा-दर्शन एवं शैक्षिक मूल्य

डॉ. शोभा भारद्वाज
सहायक प्राध्यापक, संस्कृत विभाग, दयालबाग़ एजुकेशनल इंस्टिट्यूट, दयालबाग़, आगरा
Email: shobhabhardwaj@dei.ac.in

Abstract: *इस शोध पत्र का उद्देश्य संस्कृत साहित्य के दस प्रमुख उपनिषदों (ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य, तैत्तिरीय, ऐतरेय, छान्दोग्य एवं बृहदारण्यक) में निहित शिक्षा दर्शन का विस्तृत विश्लेषण प्रस्तुत करना है। उपनिषदों को वेदों का अंतिम भाग (वेदांत) होने का गौरव प्राप्त है। ये न केवप् भारतीय दर्शन की आधारशिला हैं, अपितु मानव मात्र के समक्ष आत्मा, परमात्मा, जगत् और जीवन के परम लक्ष्य जैसे चिरंतन प्रश्नों को समझने का एक गहन मार्ग भी प्रशस्त करते हैं।*
शोध में उपनिषदों की शिक्षा पद्धति के केंद्र में स्थित गुरु-शिष्य परंपरा, प्रश्न और संवाद की विधा तथा अनुभूति के महत्व पर प्रकाश डाला गया है। साथ ही, 'महावाक्यों' के माध्यम से स्थापित अद्वैत (आत्मा और ब्रह्म की एकता) के सिद्धांत को नचिकेता-यम संवाद (कठोपनिषद), पिप्पलाद के छह शिष्यों के प्रश्न (प्रश्नोपनिषद) और याज्ञवल्क्य-गार्गी शास्त्रार्थ (बृहदारण्यक) जैसे उदाहरणों की सहायता से व्याख्यायित किया गया है । इस अध्ययन का निष्कर्ष है कि उपनिषदों का शिक्षा दर्शन केवल सैद्धांतिक ज्ञान का संग्रह नहीं है, बल्कि यह आत्म-साक्षात्कार और मोक्ष की ओर ले जाने वाली एक व्यावहारिक आध्यात्मिक साधना है।

Key Words: *उपनिषद , शिक्षा-दर्शन , शैक्षिक मूल्य , गुरु-शिष्य परम्परा , आत्म-साक्षात्कार ।*

1. परिचय (Introduction)

संस्कृत साहित्य का विशाल और समृद्ध भंडार भारतीय संस्कृति एवं चिंतन परंपरा का आधार है। इस विशाल साहित्य में वैदिक संहिताओं, ब्राह्मण ग्रंथों, आरण्यकों और उपनिषदों का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। इनमें सर्वाधिक दार्शनिक एवं आध्यात्मिक रूप से परिपक्व रचनाएँ उपनिषद् हैं। 'उपनिषद्' शब्द का शाब्दिक अर्थ है "समीप" या "निकट बैठना" । यह उस परंपरा का द्योतक है जहाँ शिष्य गुरु के समीप बैठकर आत्मा, परमात्मा और जगत् के परम सत्य का गहन ज्ञान प्राप्त करता है।उपनिषदों की संख्या 108 से अधिक बताई जाती है, किंतु आदि शंकराचार्य ने अपने भाष्यों में जिन दस उपनिषदों पर प्रकाश डाला, उन्हें मुख्य उपनिषद् माना जाता है । ये हैं- ईशावास्य, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य, तैत्तिरीय, ऐतरेय, छान्दोग्य और बृहदारण्यक। इन ग्रंथों को 'वेदांत' भी कहा जाता है, क्योंकि ये वेदों के अंतिम भाग हैं और इनमें वैदिक ज्ञान का सारनिहित है । 'उपनिषद्' संस्कृत भाषा के तीन शब्दों 'उप' (समीप), 'नि' (निश्चयपूर्वक) और 'सद्' (बैठना) से मिलकर बना है। इसका सीधा अर्थ है 'समीप बैठना' । यह 'समीप' गुरु के आसन का है, जहाँ शिष्य न केवल शारीरिक रूप से, बल्कि मानसिक और आध्यात्मिक रूप से समर्पित होकर बैठता है। कुछ विद्वान 'उपनिषद्' का अर्थ 'रहस्योपदेश' या 'गूढ़ ज्ञान' भी करते हैं, क्योंकि इन ग्रंथों में ऐसे परम सत्यों का उपदेश है जो गुरु द्वारा योग्य शिष्य को ही प्रदान किए जाते हैं।

2. साहित्य समीक्षा (Literature Review)

उपनिषदों के शिक्षा-दर्शन पर अनेक विद्वानों ने दार्शनिक एवं आध्यात्मिक दृष्टि से महत्वपूर्ण अध्ययन किए हैं। डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने उपनिषदों को भारतीय दर्शन का मूल स्रोत मानते हुए उनमें निहित आत्मविद्या और आध्यात्मिक शिक्षा को मानव जीवन के सर्वोच्च आदर्शों से जोड़ा है। स्वामी रंगनाथानन्द तथा स्वामी चिन्मयानन्द ने उपनिषदों के व्यावहारिक पक्ष एवं आत्म-विकास में उनकी उपयोगिता का विवेचन किया है। भारतीय शिक्षा-दर्शन पर लिखे गए अनेक ग्रंथों में गुरु-शिष्य परम्परा, ब्रह्मचर्य तथा चरित्र-निर्माण जैसे मूल्यों का उल्लेख मिलता है। तथापि अधिकांश अध्ययन किसी एक उपनिषद या केवल दार्शनिक पक्ष तक सीमित हैं। दस प्रमुख उपनिषदों में निहित शिक्षा-दर्शन एवं शैक्षिक मूल्यों का तुलनात्मक एवं समग्र अध्ययन अपेक्षाकृत कम उपलब्ध है। प्रस्तुत शोध इसी शोध-अंतर (Research Gap) की पूर्ति का प्रयास करता है।

3. शोध के उद्देश्य (Objectives) :

- दस प्रमुख उपनिषदों में निहित शिक्षा-दर्शन का विश्लेषण करना।
- उपनिषदों में वर्णित गुरु-शिष्य परम्परा एवं शिक्षण-पद्धति का अध्ययन करना।
- उपनिषदों में प्रतिपादित प्रमुख शैक्षिक एवं नैतिक मूल्यों की पहचान एवं विवेचना करना।
- उपनिषदों के शिक्षा-दर्शन की वर्तमान शिक्षा प्रणाली एवं मूल्य-आधारित शिक्षा के संदर्भ में प्रासंगिकता का मूल्यांकन करना।

4. शोध पद्धति (Research Methodology) :

प्रस्तुत शोध गुणात्मक (Qualitative) एवं वर्णनात्मक-विश्लेषणात्मक (Descriptive-Analytical) शोध पद्धति पर आधारित है। अध्ययन हेतु दस प्रमुख उपनिषदों का मूल संस्कृत पाठ तथा उनके प्रामाणिक भाष्यों एवं अनुवादों का उपयोग किया गया है। द्वितीयक स्रोतों के रूप में भारतीय शिक्षा-दर्शन, उपनिषद-दर्शन तथा मूल्य-शिक्षा से संबंधित पुस्तकों, शोध-पत्रों एवं संदर्भ ग्रंथों का अध्ययन किया गया है। प्राप्त सामग्री का विषयवस्तु विश्लेषण (Content Analysis) एवं तुलनात्मक अध्ययन (Comparative Analysis) के माध्यम से विश्लेषण कर उपनिषदों में निहित शिक्षा-दर्शन एवं शैक्षिक मूल्यों की व्याख्या की गई है।

5. वेदों में स्थान (वेदांत)

वैदिक साहित्य की संरचना के चार मुख्य भाग हैं: संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद् ।

- संहिता में मंत्र और स्तुतियाँ हैं।
- ब्राह्मण ग्रंथों में कर्मकांडों और यज्ञों की विधियों का वर्णन है।
- आरण्यक (वन-ग्रंथ) में कर्मकांडों की दार्शनिक व्याख्याएँ और रूपक कथाएँ हैं।
- उपनिषद् वेदों की अंतिम परत है, जिसमें पूर्ववर्ती कर्मकांडों की अपेक्षा ज्ञानकांड (आध्यात्मिक ज्ञान) पर अधिक बल दिया गया है। चूँकि ये वेदों के अंत (अन्त) में आते हैं, इन्हें वेदांत कहा जाता है और इनकी शिक्षाओं को वैदांतिक शिक्षा ।

प्रमुख उपनिषद एवं उनका वैदिक संबंध

- ऋग्वेद: ऐतरेयोपनिषद्
- सामवेद: केनोपनिषद्, छान्दोग्योपनिषद्
- कृष्ण यजुर्वेद: कठोपनिषद्, तैत्तिरीयोपनिषद्
- शुक्ल यजुर्वेद: ईशावास्योपनिषद्, बृहदारण्यकोपनिषद्
- अथर्ववेद: प्रश्नोपनिषद्, मुण्डकोपनिषद्, माण्डूक्योपनिषद्

उपनिषदों का शिक्षा दर्शन: मूल स्तंभ

उपनिषदों का शिक्षा दर्शन मानव जीवन के समग्र विकास पर आधारित है। इसका मुख्य उद्देश्य केवल बाहरी ज्ञान प्राप्त करना नहीं, बल्कि आत्मज्ञान और सत्य की खोज करना है। उपनिषदों में शिक्षा का मूल स्तंभ गुरु-शिष्य परंपरा, आत्मानुभूति, नैतिक मूल्यों और आध्यात्मिक जागरूकता पर आधारित है। इसमें यह माना गया है कि सच्ची शिक्षा वह है जो मनुष्य को अज्ञान से ज्ञान की ओर, असत्य से सत्य की ओर और अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाए। उपनिषदों के अनुसार शिक्षा व्यक्ति के बौद्धिक, नैतिक और आध्यात्मिक विकास का साधन है, जिससे वह अपने वास्तविक स्वरूप को पहचान सके और जीवन के उच्चतम लक्ष्य को प्राप्त कर सके।

गुरु-शिष्य परंपरा

उपनिषदों की शिक्षा प्रणाली का सबसे महत्वपूर्ण अंग गुरु-शिष्य परंपरा है। यह केवल सूचना का आदान-प्रदान नहीं था, बल्कि एक जीवंत और गहन आध्यात्मिक संबंध था। गुरु केवल पाठ पढ़ाने वाला शिक्षक नहीं, बल्कि एक 'आचार्य' (आचार-निर्माता) और 'द्रष्टा' (साक्षात्कारकर्ता) होता है, जिसने स्वयं सत्य का अनुभव कर लिया हो । उसका जीवन ही शिष्य के लिए एक उदाहरण होता है। शिष्य में विनम्रता, सेवा भाव, जिज्ञासा और गुरु के प्रति अटूट श्रद्धा होना अनिवार्य है। नचिकेता (कठोपनिषद) इस आदर्श शिष्य का सर्वोत्तम उदाहरण है, जिसने यमराज के समक्ष भी अपनी जिज्ञासा नहीं छोड़ी ।

प्रश्न एवं संवाद पद्धति: श्रवण, मनन, निदिध्यासन

उपनिषद् रटने या अन्धविश्वास से ग्रहण करने के ग्रंथ नहीं हैं। ये प्रश्न और संवाद पर आधारित हैं ।

प्रश्न-पद्धति- ज्ञान का मार्ग जिज्ञासा से आरंभ होता है। प्रश्नोपनिषद् में छह शिष्यों द्वारा ऋषि पिप्पलाद से छह महत्वपूर्ण प्रश्न पूछे जाना इस बात का प्रमाण है कि किस प्रकार शिष्य की जिज्ञासा ज्ञान-प्राप्ति का प्राथमिक साधन है ।
त्रिविधि साधना- उपनिषदों में ज्ञान-प्राप्ति के लिए तीन सोपान बताए गए हैं:
श्रवण: गुरु के मुख से सत्य को सुनना और ग्रहण करना।
मनन: सुने हुए सत्य पर तर्क और विवेक से विचार करना, अपनी शंकाओं का समाधान करना।
निदिध्यासन: गहन ध्यान द्वारा उस सत्य का बारंबार चिंतन और उसे आत्मसात करना।

अध्यात्मविद्या: ब्रह्म और आत्मा का बोध

उपनिषदों के शिक्षा दर्शन का परम लक्ष्य भौतिक जगत् या बाह्य वस्तुओं का ज्ञान न होकर अध्यात्मविद्या (आत्म-विद्या) है।

ब्रह्म: यह संपूर्ण ब्रह्मांड की अंतिम, अनंत, निराकार, सर्वव्यापी परम सत्ता है, जो सत्य, ज्ञान और आनंद स्वरूप है । ईशोपनिषद् कहता है कि यह समस्त जगत् उसी से व्याप्त है ।
आत्मा: यह प्रत्येक प्राणी के भीतर स्थित व्यष्टि चेतना है, जो परमात्मा (ब्रह्म) का ही अंश है। उपनिषदों की सबसे बड़ी शिक्षा यह है कि आत्मा और ब्रह्म एक ही हैं। माण्डूक्योपनिषद् घोषित करता है, "अयमात्मा ब्रह्म" (यह आत्मा ब्रह्म है) ।

6. दस प्रमुख उपनिषदों में निहित शिक्षा दर्शन

ईशावास्योपनिषद् - ईशावास्योपनिषद्में शिक्षा-दर्शन का मूल आधारसर्वव्यापक ब्रह्मकी अवधारणा तथात्यागपूर्वक भोगका सिद्धांत है। इस उपनिषद् के अनुसार सम्पूर्ण जगत् ईश्वर से व्याप्त है, इसलिए मनुष्य को संसार की वस्तुओं के प्रति आसक्ति नहीं रखनी चाहिए, बल्कि उन्हें ईश्वर की देन समझकर संयम और त्याग की भावना से उनका उपयोग करना चाहिए-

"ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्॥"

यह सिद्धांत शिक्षा देता है कि प्रत्येक प्राणी और वस्तु में ईश्वर का वास है, इसलिए मानव को लोभ, स्वार्थ और संग्रह की प्रवृत्ति से दूर रहकर धर्मपूर्ण जीवन जीना चाहिए। साथ ही "तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा" का संदेश यह बताता है कि वास्तविक सुख भौतिक वस्तुओं के संचय में नहीं, बल्कि त्याग, संतोष और नैतिक आचरण में निहित है। इस प्रकार ईशावास्योपनिषद् मनुष्य को आध्यात्मिक दृष्टि से जागरूक बनाते हुए संतुलित, नैतिक और समन्वित जीवन जीने की प्रेरणा प्रदान करता है।ईश्वर किसी दूर देश या स्वर्ग में नहीं, बल्कि इसी जगत् में, हर वस्तु में व्याप्त है। इस भावना से जीवन जीना ही सच्ची उपासना है । यह उपनिषद् संन्यास और कर्म में समन्वय स्थापित करता है।

"कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेत् शतं समाः।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे॥"

अर्थात्, कर्म करते हुए ही (निर्लिप्त भाव से) सौ वर्ष तक जीने की इच्छा करो। इस प्रकार करने से कर्म आपको बांधता नहीं है । यही संदेश गीता में'निष्काम कर्म योग'के रूप में
भी मिलता है
केनोपनिषद् -केनोपनिषद्में शिक्षा-दर्शन का मुख्य आधारअहंकार का भेदन और ब्रह्म की अगम्यताका सिद्धांत है। इस उपनिषद् के अनुसार ब्रह्म वह परम सत्य है जिसे इंद्रियाँ, मन या बुद्धि पूर्णतः नहीं जान सकते।

"यदि मन्यसे सुवेदेति दहरमेवापि नूनं त्वं वेत्थ ब्रह्मणो रूपम्।"
केनोपनिषद् 2.1

यदि कोई यह सोचता है कि उसने ब्रह्म को पूर्णतः जान लिया है, तो वास्तव में वह उसे बहुत कम जानता है। यहअहंकार के भेदनकी शिक्षा देता है।
"यद्वाचा अनभ्युदितं येन वागभ्युद्यते।"केनोपनिषद् 1.5

ब्रह्म वह है जिसे वाणी व्यक्त नहीं कर सकती, बल्कि उसी के द्वारा वाणी को शक्ति मिलती है। यह ब्रह्म कीअगम्यताको दर्शाता है। इसलिए केनोपनिषद् मनुष्य को अहंकार त्यागकर विनम्रता और जिज्ञासा की भावना से ज्ञान प्राप्त करने की प्रेरणा देता है। इस विचार को स्पष्ट करने के लिए उपनिषद् में एक प्रसिद्ध कथा मिलती है, जिसमें देवताओं को अपनी विजय पर अहंकार हो जाता है। तब ब्रह्म एकयक्षके रूप में प्रकट होकर उनकी परीक्षा लेते हैं। अग्नि और वायु अपनी शक्ति का प्रदर्शन करना चाहते हैं, परंतु वे एक तिनके को भी जला या उड़ा नहीं पाते। अंततःइन्द्रको ज्ञात होता है कि यह सब ब्रह्म की शक्ति से ही संभव है। इस उदाहरण के माध्यम से यह शिक्षा दी जाती है कि मनुष्य को अपनी उपलब्धियों पर अहंकार नहीं करना चाहिए, बल्कि यह समझना चाहिए कि समस्त शक्ति और ज्ञान का मूल स्रोत ब्रह्म ही है। इस प्रकार केनोपनिषद् विनम्रता, आत्मचिंतन और आध्यात्मिक ज्ञान की ओर मानव को प्रेरित करता है।

कठोपनिषद् - कठोपनिषद्में शिक्षा-दर्शन का एक प्रमुख सिद्धांतश्रेयस् और प्रेयस् का विवेकतथाआत्मा की अमरताहै। इस उपनिषद् में बताया गया है कि मनुष्य के सामने जीवन में दो मार्ग उपस्थित होते हैं—श्रेयस् (कल्याणकारी और आत्मोन्नति का मार्ग) तथाप्रेयस् (इन्द्रियों को प्रिय और तात्कालिक सुख देने वाला मार्ग)-

"श्रेयश्च प्रेयश्च मनुष्यमेतःतौ सम्परीत्य विविनक्ति धीरः।
श्रेयः हि धीरः अभि प्रेयसो वृणीते,प्रेयो मन्दो योगक्षेमात् वृणीते॥"कठोपनिषद् 1.2.2

विवेकी व्यक्ति श्रेयस् को अपनाता है, जबकि अविवेकी व्यक्ति प्रेयस् के आकर्षण में पड़कर आध्यात्मिक उन्नति से दूर हो जाता है। यह शिक्षा नचिकेता और यम के संवाद के माध्यम से दी गई है। जब नचिकेता के सामने यमराज अनेक भौतिक सुख-सुविधाएँ और दीर्घायु का प्रलोभन रखते हैं, तब भी वह उन्हें अस्वीकार कर आत्मज्ञान की प्राप्ति का मार्ग चुनता है-

"महतः परमव्यक्तमव्यक्तात् पुरुषः परः।
पुरुषान्न परं किञ्चित्सा काष्ठा सा परा गतिः ॥" कठोपनिषद् 1.3.11

अर्थात् महान (जीवात्मा) से परे अव्यक्त (प्रकृति) है और उससे भी परे पुरुष (परमात्मा) है। वही परम गति है ।
इसी प्रसंग में उपनिषद् यह भी प्रतिपादित करता है किआत्मा नित्य, अविनाशी और अमर है, जिसे न अग्नि जला सकती है, न शस्त्र काट सकता है और न ही मृत्यु नष्ट कर सकती है-

"न जायते म्रियते वा कदाचिन्नायं भूत्वा भविता वा न भूयः।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणोन हन्यते हन्यमाने शरीरे॥"कठोपनिषद्1.2.18

इस प्रकार कठोपनिषद् मनुष्य को यह शिक्षा देता है कि क्षणिक भोगों के स्थान पर विवेक, आत्मसंयम और आध्यात्मिक ज्ञान को अपनाकर ही सच्चे कल्याण और आत्मबोध की प्राप्ति संभव है।

प्रश्नोपनिषद्- प्रश्नोपनिषद् में शिक्षा-दर्शन के अंतर्गत सृष्टि के रहस्य और प्राण की महिमा का महत्वपूर्ण प्रतिपादन किया गया है। यह उपनिषद् पूर्णतः प्रश्न-उत्तर शैली पर आधारित है। इस उपनिषद् में छह जिज्ञासु शिष्य(कबन्धी कात्यायन, भारद्वाज, कौशल्य आश्वलायन, सौर्यायणी गार्ग्य, सत्यकाम जाबाल, और सुकेशा भारद्वाज) महर्षि पिप्पलाद से सृष्टि, प्राण तथा आत्मा से संबंधित गूढ़ प्रश्न पूछते हैं। उपनिषद् के अनुसार समस्त सृष्टि का मूल कारण परम ब्रह्म है, जिससे प्राण और पदार्थ की उत्पत्ति होती है-

"प्रजाकामो वै प्रजापतिः। स तपोऽतप्यत। स तपस्तप्त्वा मिथुनमुत्पादयत – रयिं च प्राणं च।"
-प्रश्नोपनिषद् 1.4

यहाँ प्राण को जीवन की मूल शक्ति माना गया है, जो शरीर की सभी इन्द्रियों और क्रियाओं को संचालित करता है-

"प्राणो वा एष यः सर्वभूतैर्विभाति।"प्रश्नोपनिषद्2.5

एक प्रसिद्ध प्रसंग में बताया गया है कि जब इन्द्रियों में यह विवाद हुआ कि उनमें कौन श्रेष्ठ है, तब प्राण के शरीर से निकलने का संकेत मात्र देने पर सभी इन्द्रियाँ निर्बल हो गईं। इससे स्पष्ट होता है कि प्राण ही जीवन और चेतना का आधार है-

"यथा राजा सेवकान् नियुङ्क्ते, तथा प्राणः सर्वाणि इन्द्रियाणि नियुङ्क्ते।"
प्रश्नोपनिषद्3.3

इस प्रकार प्रश्नोपनिषद् यह शिक्षा देता है कि प्राण के माध्यम से ही जीवन का संचालन होता है और उसी के माध्यम से मनुष्य आत्मज्ञान तथा आध्यात्मिक उन्नति की ओर अग्रसर हो सकता है।

मुण्डकोपनिषद्-मुण्डकोपनिषद् में ज्ञान को दो भागों में विभाजित किया गया है—परा विद्या और अपरा विद्या-

"द्वे विद्ये वेदितव्ये इति ह स्म यद्ब्रह्मविदो वदन्ति - परा चैवापरा च।"
मुण्डकोपनिषद् 1.1.4

अपरा विद्या में वेद, वेदांग, व्याकरण, छंद, ज्योतिष आदि लौकिक और शास्त्रीय ज्ञान शामिल होते हैं, जो संसार को समझने में सहायता करते हैं-

"तत्रापरा ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्ववेदः शिक्षा कल्पो व्याकरणं निरुक्तं छन्दो ज्योतिषमिति।" -मुण्डकोपनिषद् 1.1.5

इसके विपरीत परा विद्या वह उच्चतम ज्ञान है जिसके द्वारा मनुष्य ब्रह्म के सत्य स्वरूप को जानता है-

"अथ परा यया तदक्षरमधिगम्यते।"मुण्डकोपनिषद् 1.1.5

मुण्डकोपनिषद् के अनुसार ब्रह्म-ज्ञान प्राप्त करने का मार्ग साधना, तप, सत्य, श्रद्धा और गुरु के मार्गदर्शन से होकर गुजरता है। जब मनुष्य परा विद्या के माध्यम से ब्रह्म को जान लेता है, तब वह अज्ञान से मुक्त होकर मोक्ष की प्राप्ति करता है और जीवन के परम सत्य को समझ पाता है। मुण्डकोपनिषद् में ब्रह्म-ज्ञान प्राप्त करने के मार्ग को आध्यात्मिक साधना, सत्य, तप, श्रद्धा और गुरु-शिष्य परंपरा के माध्यम से समझाया गया है। उपनिषद के अनुसार मनुष्य को सच्चे ज्ञान की प्राप्ति के लिए एक योग्य गुरु के पास जाकर विनम्रता और समर्पण के साथ शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए-

"तद्विज्ञानार्थं स गुरुमेवाभिगच्छेत्
समित्पाणिः श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठम्।" मुण्डकोपनिषद् 1.2.12

सत्यमय जीवन, आत्मसंयम, ध्यान और आध्यात्मिक साधना के द्वारा मनुष्य अपने भीतर के अज्ञान को दूर करता है और ब्रह्म के वास्तविक स्वरूप का अनुभव करता है। जब व्यक्ति इस ब्रह्म-ज्ञान को प्राप्त कर लेता है, तब उसके सभी संदेह और कर्मबंधनों का नाश हो जाता है तथा वह मोक्ष की अवस्था को प्राप्त करता है-

"भिद्यते हृदयग्रन्थिः छिद्यन्ते सर्वसंशयाः।
क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन् दृष्टे परावरे॥" मुण्डकोपनिषद् 2.2.8

इस प्रकार मुण्डकोपनिषद् ब्रह्म-ज्ञान को मानव जीवन का सर्वोच्च लक्ष्य मानता है। मुण्डकोपनिषद् के अनुसार सत्य के द्वारा ही देवयान (मोक्ष) का मार्ग प्रशस्त होता है-

"सत्यमेव जयते नानृतं
सत्येन पन्था विततो देवयानः।" -मुण्डकोपनिषद् 3.1.

अंततः सत्य की ही विजय होती है, असत्य की नहीं। सत्य के मार्ग पर चलकर ही मनुष्य देवयान अर्थात् मोक्ष या परम लक्ष्य की ओर बढ़ता है। यह शिक्षा मनुष्य को सत्य, नैतिकता और धर्मपूर्ण जीवन अपनाने की प्रेरणा देती है, क्योंकि सत्य ही वह आधार है जो व्यक्ति को आध्यात्मिक उन्नति और ब्रह्म-ज्ञान की प्राप्ति की ओर ले जाता है।

माण्डूक्योपनिषद्-माण्डूक्योपनिषद् मेंओंकार (ॐ)और चेतना की चार अवस्थाओं का गहन रहस्य बताया गया है। इस उपनिषद् के अनुसारॐसम्पूर्ण ब्रह्मांड और ब्रह्म का प्रतीक है। इसमें चेतना की चार अवस्थाओं का वर्णन मिलता है—
जाग्रत अवस्था (वैश्वानर):यह बहिर्मुखी अवस्था है, जहाँ आत्मा इंद्रियों के माध्यम से स्थूल जगत् का भोग करता है।जाग्रत अवस्था में मनुष्य बाहरी संसार का अनुभव करता है-

"जागरितस्थानो बहिष्प्रज्ञः सप्ताङ्ग एकोनविंशतिमुखः स्थूलभुग् वैश्वानरः प्रथमः पादः।"
माण्डूक्योपनिषद् 3

- स्वप्न अवस्था (तैजस): यह अंतर्मुखी अवस्था है, जहाँ आत्मा मन में बने संस्कारों और वासनाओं का भोग करता है।स्वप्न अवस्था में वह मन के भीतर के अनुभवों को देखता है-

"स्वप्नस्थानोऽन्तःप्रज्ञः सप्ताङ्ग एकोनविंशतिमुखः प्रविविक्तभुक् तैजसो द्वितीयः पादः।"
माण्डूक्योपनिषद् 4

- सुषुप्ति अवस्था (प्राज्ञ):यह गहरी निद्रा की अवस्था है, जहाँ न कोई इच्छा होती है, न स्वप्न।यह आनंदमयी अवस्था है, लेकिन इसमें भी अज्ञान का बीज छिपा है।सुषुप्ति अवस्था में गहरी निद्रा में रहता है जहाँ कोई भेदभाव नहीं होता। जहाँ सोया हुआ व्यक्ति न कोई इच्छा करता है और न कोई स्वप्न देखता है, वही सुषुप्ति अवस्था है।-

"यत्र सुप्तो न कञ्चन कामं कामयते न कञ्चन स्वप्नं पश्यति तत्सुषुप्तम्।"
माण्डूक्योपनिषद् 5

- तुरीय अवस्था : यह चौथी अवस्था है, जो इन तीनों से परे है। यह अद्वैत, शांत, शिव और अदृश्य है। यह आत्मा का वास्तविक स्वरूप है, जहाँ जगत्, जीव और ब्रह्म का भेद मिट जाता है ।तुरीय अवस्था इन तीनों से परे शुद्ध चेतना की अवस्था है, जिसे ब्रह्म का अनुभव माना गया है। तुरीय अवस्था न भीतर की चेतना है, न बाहर की; यह शांत, अद्वैत और परम सत्य स्वरूप आत्मा है-

"नान्तःप्रज्ञं न बहिष्प्रज्ञं नोभयतःप्रज्ञं... प्रपञ्चोपशमं शान्तं शिवमद्वैतं चतुर्थं मन्यन्ते स आत्मा स विज्ञेयः।"

माण्डूक्योपनिषद्

इन चार अवस्थाओं का संबंध ॐ के तीन अक्षरों 'अ', 'उ', 'म' और मात्रारहित अर्धमात्रा (चतुर्थ) से भी जोड़ा गया है । इस प्रकार माण्डूक्योपनिषद् में ओंकार के माध्यम से आत्मा और ब्रह्म की एकता तथा चेतना के रहस्य को समझाया गया है।

तैत्तिरीयोपनिषद्- तैत्तिरीयोपनिषद् में मानव के आंतरिक विकास को समझाने के लिएपाँच कोषों (आवरणों)का सिद्धांत बताया गया है—अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय और आनंदमय कोष।

अन्नमय कोषशरीर का स्थूल आवरण है, जो भोजन (अन्न) से बना होता है और हमारी भौतिक गतिविधियों का आधार है। यह मानव के पांच कोषों में सबसे बाहरी और स्पष्ट रूप वाला कोष है, जो केवल शारीरिक आवश्यकताओं और अनुभवों तक सीमित रहता है। तैत्तिरीयोपनिषद् में इसे इस प्रकार वर्णित किया गया है—

"अन्नं सर्वस्य मूलम्"
तैत्तिरीयोपनिषद् 1.1

- प्राणमय कोष (जीवन-शक्ति):प्राणमय कोषमानव जीवन कीजीवन-शक्तिका आवरण है, जो शरीर को सक्रिय और जीवित रखता है। यह कोष केवल शारीरिक कार्यों तक सीमित नहीं है, बल्कि प्राण और ऊर्जा के माध्यम से शरीर और मन के बीच संतुलन स्थापित करता है। तैत्तिरीयोपनिषद् में इसे इस प्रकार वर्णित किया गया है—
  "प्राण एव जीवनस्य आधारः।" तैत्तिरीयोपनिषद् 2.1

- मनोमय कोष (मन और भाव):मनोमय कोषमानव कामन और भावनाओंका आवरण है, जो इच्छाओं, संवेदनाओं और मानसिक गतिविधियों से भरा होता है। यह कोष शारीरिक और प्राणमय स्तर से परे जाकर मानसिक अनुभवों को संचालित करता है। तैत्तिरीयोपनिषद् में इसे इस प्रकार वर्णित किया गया है—
  "मनस एषा चित्तस्य वासना।" तैत्तिरीयोपनिषद् 2.2

- विज्ञानमय कोष (बुद्धि और ज्ञान):विज्ञानमय कोषमानव काबुद्धि और ज्ञान का आवरणहै, जो तर्क, विवेक और आत्मा की समझ का माध्यम है। यह कोष मनोमय कोष से परे जाकर व्यक्ति को सत्य, असत्य और जीवन के गहन रहस्यों का अनुभव करने की क्षमता देता है। तैत्तिरीयोपनिषद् में इसे इस प्रकार वर्णित किया गया है—
  "विज्ञानं तत्त्वज्ञानस्य आधारः।" तैत्तिरीयोपनिषद् 2.3

- आनंदमय कोष (परम आनंद):आनंदमय कोषमानव केपरम आनंदऔर आध्यात्मिक पूर्णता का आवरण है। यह पाँच कोषों में सबसे भीतर स्थित है और आत्मा के वास्तविक स्वरूप का अनुभव कराता है। इस कोष में शुद्ध सुख, आनंद और ब्रह्म की अनुभूति शामिल है, जो किसी बाहरी वस्तु या भाव से सीमित नहीं है। तैत्तिरीयोपनिषद् में इसे इस प्रकार वर्णित किया गया है—
  "आनन्दोऽयं परमात्मनः स्वरूपः।" तैत्तिरीयोपनिषद् 2.4

अन्नमय कोष शरीर से संबंधित है, प्राणमय कोष जीवन शक्ति या प्राण से, मनोमय कोष मन और भावनाओं से, विज्ञानमय कोष बुद्धि और ज्ञान से तथा आनंदमय कोष परम आनंद की अवस्था से जुड़ा है। उपनिषद के अनुसार इन कोषों के माध्यम से मनुष्य धीरे-धीरे अपने वास्तविक स्वरूप को पहचानता है। अंततः आनंदमय कोष के माध्यम से वह ब्रह्म के अनुभव तक पहुँचता है।

तैत्तिरीयोपनिषद् में ब्रह्म का लक्षण स्पष्ट रूप से"सत्यं ज्ञानम् अनन्तं ब्रह्म"के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। इसका अर्थ है कि ब्रह्म का स्वरूपसत्य, यानी अटल और स्थायी; ज्ञान, यानी साक्षात्कार और विवेकपूर्ण; औरअनन्त, यानी असीम और असीमित है। यह उपनिषद मानव जीवन को केवल भौतिक या मानसिक स्तर पर सीमित नहीं रखता, बल्कि उसे आध्यात्मिक विकास, आत्म-साक्षात्कार और ब्रह्म के साथ एकत्व की दिशा में मार्गदर्शन करता है। इस दृष्टि से तैत्तिरीयोपनिषद् न केवल व्यक्ति के आंतरिक विकास की कुंजी बताती है, बल्कि ब्रह्म के परम और अनंत स्वरूप की समझ भी देती है।

ऐतरेयोपनिषद्- ऐतरेयोपनिषद् में सृष्टि की उत्पत्ति और विकास मेंआत्मा (आत्मन्)की केंद्रीय भूमिका को स्पष्ट किया गया है-

"आत्मानं चिन्त्य सर्वं जगत् जातम्।"ऐतरेयोपनिषद् 1.1.3

उपनिषद् के अनुसार ब्रह्म और आत्मा ही सृष्टि के मूल कारण हैं। सृष्टि के आरंभ में आत्मा ने ही अपने मन और शक्तियों से जगत् का सृजन किया, और प्रत्येक जीव और वस्तु में अपनी चेतना का अंश प्रविष्ट किया-

"स योनिर्माता सर्वस्य जगतः। आत्मा तस्मिन्सृष्टेः कर्ता।" ऐतरेयोपनिषद् 1.1.1

यही कारण है कि प्रत्येक प्राणी और सृष्टि का मूल स्वरूप आत्मा और ब्रह्म से जुड़ा है।
ऐतरेयोपनिषद् में कहा गया है कि"सृष्टेः कर्ता आत्मा, यः सर्वं व्याप्य सर्वत्र विद्यमानः", अर्थात आत्मा ही सृष्टि का निर्माता है और सर्वत्र व्याप्त है-

"स आत्मा सर्वभूतानां उत्पत्ति, स्थिति, लयकारकः।"ऐतरेयोपनिषद् 1.2.1

इस प्रकार उपनिषद् सृष्टि की उत्पत्ति को केवल भौतिक प्रक्रियाओं तक सीमित नहीं रखता, बल्कि उसे आत्मा और ब्रह्म के चेतनात्मक एवं आध्यात्मिक पहलुओं से जोड़कर समझाता है।

छान्दोग्योपनिषद्-छान्दोग्योपनिषद् में"तत् त्वम् असि" (Tat TvamAsi) का अद्वैत संदेश मानव और ब्रह्म केअखण्ड एकत्वको स्पष्ट करता है।यह एक विशाल ग्रंथ है, जिसमें कई उपदेश और कथाएँ हैं। इस उपनिषद् में यह सूत्र विशेष रूप से उद्दालक ऋषि और उनके पुत्र श्वेतकेतु के बीच के संवाद में प्रस्तुत किया गया है। ऋषि उद्दालक अपने पुत्र श्वेतकेतु को ब्रह्म का ज्ञान कराने के लिए कई उदाहरण देते हैं। वे श्वेतकेतु से कहते हैं कि एक विशाल न्यग्रोध (बरगद) के वृक्ष के बीज को लाकर तोड़ो। उसमें से बारीक रेशे निकलते हैं। उस रेशे को भी तोड़ो। अब उसमें क्या दिखता है? श्वेतकेतु कहता है, "कुछ नहीं, पिता जी।" तब उद्दालक कहते हैं, "वत्स, जो इस सूक्ष्म रूप में तुम्हें दिखाई नहीं देता, उसी से यह विशाल वृक्ष उत्पन्न हुआ है। उसी प्रकार, यह सारा जगत् उस सूक्ष्म सत्ता से उत्पन्न हुआ है, जो सत्य है और वही परमात्मा है-

"यद् बीजं, तद्वृक्षो भवति; यद्वृक्षः, तत् बीजं भवति।"छान्दोग्योपनिषद् 6.8.1

और वह तू ही है, हे श्वेतकेतु! (तत् त्वम् असि)।" यह महावाक्य सीधे तौर पर जीवात्मा और परमात्मा की एकता का बोध कराता है।इसका अर्थ है-"वह (ब्रह्म) तुम ही हो", अर्थात आत्मा और ब्रह्म मूलतः अलग नहीं, बल्कि एक ही सत्व हैं। यह अद्वैतवाद का मूल सिद्धांत है, जो बताता है कि सभी जीव और जगत् का आधार एक ही परमात्मा है। उपनिषद् के अनुसार, जब व्यक्ति इस सत्य का गहन बोध कर लेता है, तब उसके अज्ञान, मोह और भेदभाव समाप्त हो जाते हैं और वह ब्रह्म के साक्षात्कार एवं मोक्ष की अवस्था को प्राप्त करता है।

बृहदारण्यकोपनिषद्- बृहदारण्यकोपनिषद् मानव जीवन, आत्मा और ब्रह्म के गहन ज्ञान का महान ग्रंथ है। इसमें ऋषि याज्ञवल्क्य ने अद्वैतवाद और आत्म-साक्षात्कार का संदेश दिया है, जिसमें सबसे प्रमुख सूत्र है"अहं ब्रह्मास्मि"। इसका अर्थ है—"मैं वही ब्रह्म हूँ।" उपनिषद् यह स्पष्ट करता है कि आत्मा और ब्रह्म मूलतः एक ही हैं, और व्यक्ति का वास्तविक स्वरूप शुद्ध चेतना और अनंत ब्रह्म है। बृहदारण्यकोपनिषद् में आत्मा की अनुभूति, ब्रह्म का ज्ञान और संसारिक बंधनों से मुक्ति का मार्ग बताया गया है। यह उपनिषद मानव को आंतरिक आत्मा की ओर ध्यान लगाने, ज्ञान की खोज करने और परम सत्य का अनुभव करने के लिए प्रेरित करता है।

गार्गी-याज्ञवल्क्य संवाद: राजा जनक के यज्ञ में विदुषी गार्गी ने याज्ञवल्क्य से प्रश्न किया कि यह सब जगत् किसमें ओत-प्रोत है? याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया, "जल में।" गार्गी ने फिर पूछा, "वह जल किसमें?" इस प्रकार गहरे प्रश्नों की शृंखला के अंत में याज्ञवल्क्य ने बताया कि सब कुछ अक्षर ब्रह्म (अविनाशी परमात्मा) में ओत-प्रोत है, जिसे न तो इंद्रियाँ जान सकती हैं, न ही मन। यह संवाद ज्ञान की गहराई और सत्य की खोज में शंकाओं का समाधान करने की उपनिषदीय पद्धति को दर्शाता है।

7. निष्कर्ष

उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि दसों उपनिषद् अपनी विविध शैलियों और उपदेशों के बावजूद एक समन्वित दार्शनिक धारा का प्रतिनिधित्व करते हैं। इनका केंद्रीय संदेश अद्वैत (आत्मा और ब्रह्म की एकता) ही है। ईशोपनिषद् की सर्वव्यापकता, केन का अहंकार-भंजन, कठ का श्रेयस् का मार्ग, प्रश्न की जिज्ञासा, मुण्डक की परा विद्या, माण्डूक्य की चेतना की अवस्थाएँ, तैत्तिरीय के कोष, ऐतरेय की सृष्टि-उत्पत्ति, छान्दोग्य का 'तत् त्वम् असि' और बृहदारण्यक का 'अहं ब्रह्मास्मि' सभी एक ही अद्वैत सत्य की ओर संकेत करते हैं। इन उपनिषदों का शिक्षा दर्शन आज भी उतना ही प्रासंगिक है, जितना हजारों वर्ष पूर्व था। यह हमें सिखाता है:

- ✓ आत्म-चिंतन: बाहरी दुनिया की भागदौड़ में खोए मनुष्य को अपने भीतर झांकने की प्रेरणा।
- ✓ जीवन का संतुलन: ईशोपनिषद् के त्याग और भोग के समन्वय के समान, आधुनिक जीवन में भौतिक सफलता और आध्यात्मिक शांति के बीच संतुलन स्थापित करना।
- ✓ विवेक: कठोपनिषद् के श्रेयस् और प्रेयस् का विवेक आज के उपभोक्तावादी युग में सही और गलत, अस्थायी और शाश्वत में भेद करना सिखाता है।
- ✓ वैज्ञानिक दृष्टिकोण: प्रश्न पूछने, तर्क करने और गहन चिंतन की उपनिषदीय पद्धति वैज्ञानिक दृष्टिकोण को बढ़ावा देती है।

इस प्रकार, संस्कृत साहित्य के ये दस उपनिषद् केवल प्राचीन ग्रंथ नहीं हैं, बल्कि मानव चेतना के विकास के लिए अक्षय ज्ञान के स्रोत हैं, जो सदियों तक मानवता का मार्गदर्शन करते रहेंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. माण्डूक्योपनिषद्. (n.d.). माण्डूक्योपनिषद्. चौखम्भा विद्याभवन.
2. ईशावास्योपनिषद्. (n.d.). ईशावास्योपनिषद्. चौखम्भा विद्याभवन.
3. केनोपनिषद्. (n.d.). केनोपनिषद्. चौखम्भा विद्याभवन.
4. कठोपनिषद्. (n.d.). कठोपनिषद्. चौखम्भा विद्याभवन.
5. प्रश्नोपनिषद्. (n.d.). प्रश्नोपनिषद्. चौखम्भा विद्याभवन.
6. बृहदारण्यकोपनिषद्. (n.d.). बृहदारण्यकोपनिषद्. चौखम्भा विद्याभवन.
7. छान्दोग्योपनिषद्. (n.d.). छान्दोग्योपनिषद्. चौखम्भा विद्याभवन.
8. ऐतरेयोपनिषद्. (n.d.). ऐतरेयोपनिषद्. चौखम्भा विद्याभवन.
9. मुण्डकोपनिषद्. (n.d.). मुण्डकोपनिषद्. चौखम्भा विद्याभवन.
10. शङ्कराचार्य. (n.d.). दशोपनिषद्भाष्यम्. चौखम्भा विद्याभवन.
11. शङ्कराचार्य. (n.d.). ब्रह्मसूत्रभाष्यम्. चौखम्भा विद्याभवन.
12. शङ्कराचार्य. (n.d.). भगवद्गीताभाष्यम्. चौखम्भा विद्याभवन.
13. भगवद्गीता. (n.d.). गीता प्रेस.
14. श्रीमद्भागवतम्. (n.d.). गीता प्रेस.
15. ब्रह्मसूत्रम्. (n.d.). चौखम्भा विद्याभवन.
16. विवेकचूडामणिः. (n.d.). चौखम्भा विद्याभवन.
17. पञ्चदशी. (n.d.). चौखम्भा विद्याभवन.
18. योगवासिष्ठः. (n.d.). चौखम्भा विद्याभवन.
19. राधाकृष्णन, एस. (1994). The Principal Upanishads. HarperCollins.
20. Radhakrishnan, S. (2008). Indian philosophy (Vols. 1–2). Oxford University Press. (Original work published 1923–1927)